हमारे महानगर

Hamare Mahanagar

भारत में प्राचीनकाल में सिंधु घाटी की सभ्यता का जन्म हुआ था जो प्रायः नगरीय सभ्यता मानी जाती है। इससे स्पष्ट होता है कि भारतवासी नगरों की संस्कृति से पूर्ण परिचित थे। हालाँकि भारत मे गाँवों की आज भी अधिकता है परंतु साथ-साथ नगरीय संस्कृति का भी विकास हो रहा है। दिल्ली, कोलकता, चेन्नई और मुंबई ये चार हमारे देश के विशालतम नगर हैं जिनका अब भी विस्तार हो रहा है। इनके अतिरिक्त कई अन्य नगर भी तेजी से महानगरों का रूप लेते जा रहे हैं जिनमें हैदराबाद, नागपुर, पटना, लखनऊ, भोपाल आदि के नाम प्रमुख हैं।

महानगरों का जनजीवन तेजतर होता जा रहा है तथा यातायात व संचार के आधुनिक साधनों की उपलब्धता के कारण यह गति और भी त्रीव हो गई है। महानगरीय जनजीवन विभिन्न प्रकार के उद्योगों पर अवलंबित है जो विपुल जनसंख्या को रोजगार प्रदान करने में सक्षम हैं। यहाँ जनसंख्या की सघनता अत्यधिक है फिर भी लोग किसी न किसी धंधे से जुड़कर अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा कर ही लेते हैं। महानगरीय जनजीवन में ठहराव शायद ही कभी देखने को मिलता हो क्योंकि ऐसी स्थिति में जीवन को आंतरिक अशांति बढ़ जाती हैं अतः उद्योग और व्यापार को बहुत धक्का लगता है। महानगर सत्ता के केंद्र भी होते हैं अतः विभिन्न प्रकार की राजनीतिक हलचलें थमने का नाम नहीं लेती हैं। इस आपाधापी में समय किस तरह व्यतीत हो जाता है, इसका पता ही नहीं चलता है।

हमारे देश का महानगरीय जनजीवन विभिन्न प्रकार की जटिलताओं से भरा हुआ है। सबसे बड़ी समस्या तो यहाँ की लगातार बढ़ती आबादी है जिसे अन्य सभी समस्याओं का जन्मदाता कहा जा सकता है। पढ़े-लिखे तथा अनपढ़ दोनों ही तरह के ग्रामीण महानगरों में रोजगार और समृद्धि की आस लिए आते हैं। यहाँ उन्हें कुछ न कुछ रोजगार तो प्रायः मिल जाता है परंतु मानव संसाधनों की माँग की तुलना में उपलब्धता अधिक होने से उन्हें बहुत कम वेतन प्राप्त होता है। ऐसे में कम आयवालों का जीवन-स्तर

निम्न से निम्नतर होता जा रहा है। इनमें से अधिकाशं को महानगरों की गंदी बस्तियों में शरण लेनी पड़ती है जहाँ जीवन के लिए मूलभूत सुविधाओं का सर्वथा अभाव होता है। गंदी बस्तियों का फैलाव महानगर की गंदगी को अत्यधिक बढ़ा देता है जिससे विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ फैलती हैं। ऐसे में हमारे महानगर कूड़े के ढेर में तब्दील होते जा रहे हैं तथा यहाँ की चमक-दमक फीकी पड़ती जा रही है। प्रशासन तंत्र सभी लोगों को बिजली, पानी जैसी मूलभूत सुविधाओं को मुहैया कराने मंे असमर्थ होता जा रहा है।

हमारे महानगरों में वायु प्रदुषण तथा ध्वनि प्रदुषण चरम सीमा पर है अतः महानगरीय जनसंख्या पर इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। जहाँ ध्वनि प्रदुषण शारीरिक और मानसिक इन दोनों तरह की क्षति के लिए जिम्मेदार है। ध्वनि प्रदुषण नगरवासियों के तनाव को बढ़ाता है तथा मस्तिष्क को हर समय एक अशांत दशा में रहता है। इसके अलावा असमय बहरापन, रक्तचाप का अनियमित होना, हदय रोग आदि कई लक्षण ध्वनि प्रदुषण के कारण हो सकते हैं। महानगरों मे पीने योग्य स्वच्छ जल का अभाव देखा जा सकता है क्योंकि सप्लाई का जल एक सीमा तक ही सुरक्षित माना जाता है। परंतु इससे भी बड़ी समस्या जल की अनुपलब्धता है जिसका प्रभाव गरीब तबकों पर अधिक पड़ता है।

महानगरों के लोगों के जीवन का अन्य पहलू भी कम वासद नहीं है। यहाँ उत्सवों को उसकी समग्रता के साथ मनाने का समय किसी के पास नहीं है। अमीर तबका उत्सवों पर धन तो बहुत व्यय करता है परंतु इस दिखावेपन मे आनंद का भाव मानो खो सा जाता है तो दूसरी ओर मध्यम वर्ग अमीर बनने के फेर में उत्सवों को भविष्य में टालता दिखाई देता है। रहे निर्धन वर्ग तो उन्हें उत्सव मनाने के लिए जरूरी धन का भी अभाव रहता है अतः वे केवल औपचारिकता निभाते हैं। महानगरों में आयोजित सांस्कृतिक गतिविधियाँ कुछ धनाढ्य वर्ग के इर्द-गिर्द ही घूमती हैं केवल कुछेक राष्ट्रीय उत्सवों मंे ही जन भागीदारी देखी जा सकती है।

हमारे महानगर शिक्षा के बड़े केद्र रहे है। यह प्रलोभन तकनीकी तथा परंमपरागत शिक्षा प्राप्त करने वालों को महानगर अपनी ओर सहज ही खींच लेता है। यहाँ की शिक्षा गुणवत्ता के लिहाज से ऊँचे दरजे की कही जा सकती है जो देश भर से विद्यार्थियों को आकर्षित करती है। यही कारण है कि महानगरों में छात्र-छात्राओं की भी अच्छी-खासी संख्या

देखी जाती है। हमारे अधिकाशं महानगर संपूर्ण भारत की संस्कृति को एक साथ अभिव्यक्त करते हैं क्योंकि यहाँ देश के विभिन्न क्षेत्रों के लोग निवास करते हैं महानगरों मे गाँवों की तुलना में जातिवाद और धार्मिक कट्टरता कम पाई जाती है, यह तथ्य निर्विवाद रूप से महानगरो के पक्ष में जाता है। यहाँ आम व्यक्ति की निजि पहचान खो जाती है और इसलिए यह आभास होता है कि सारा प्रबंध एक विशाल जनसमूह के लिए हो रहा है। महानगरीय संस्कृति के विकास का यह सुखद् पहलू है कि जिस तरह से गाँवों में आज भी रूढ़िवादिता और जातिवाद का अस्तित्व बना हुआ है, शहरों में इन भ्रांतियों के लिए कोई स्थान नहीं बचा हुआ है।

महानगरीयवासी अपने लिए सब तरह की आधुनिक सुविधाओं की माँग करते देखे जाते हैं जो यह प्रर्दशित करता है कि यहाँ के लोग सदा ही अतृप्ति के भाव के साथ जीते है। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि यहाँ नैसर्गिक सुखों का प्रायः अभाव होता है जिसकी क्षतिपूर्ति लोग अन्य तरीकों से करना चाहते हैं। यह एक असंभव सा कार्य है क्योंकि प्रकृति जिन सुखों को प्रदान करती है वैसा सुख अन्य साधनों से प्राप्त नहीं किया जा सकता। गाँव के किसी तलाब मे नहाने की तुलना तरणताल के नीले पानी में नहाने से नहीं की जा सकती। कुएँ और नल के जल में ताजगी का जो अंतर है उसे कोई नहीं मिटा सकता। ग्रीष्मकाल में जो आंनद दूर-दराज के किसी पेड़ के नीचे बैठकर प्राप्त किया जा सकता है वह आनंद कूलर या वातानुकूलित यंत्र द्वारा प्राप्त ठंडी हवा में कहाँ। इस प्रकार कहा जा सकता है कि महानगरों की अट्टालिकाओं को देखकर खुश होना और बात है तथा यहाँ रहकर वास्तविकताओं का सामना करना कुछ और ही अनुभव कराता है। लेकिन महानगरों मे रोजगार की अपार संभावनाएँ हैं अतः बेरोजगार व्यक्तियों के लिए तो यह स्थान सदैव आर्कषण का केंद्र बना रह